महिला सशक्तिकरण एवं ज्योतिबा फूले

डॉ. मनोज कुमार शर्मा*

ज्योतिबा फूले केवल शूद्रादिशूद्रों के लिए ही वे प्रतिबद्ध नहीं थे, अपितु सवर्णों में जो घृणित रूढ़ियाँ थीं, उसके खिलाफ भी सक्रिय थे। 'विधवा विवाह' का उन्होंने समर्थन किया। विधवा हो जाने के बाद सवर्ण स्त्रियों का 'केशवपन' (सम्पूर्ण बाल उतार देना और उसे कुरूप बना देना) किया जाता था। फुले ने इसके विरोध में आन्दोलन किये। कुमारी माताएँ अथवा होने के बाद की माताएँ इनकी संततियों को पालने के लिए उन्होंने विशेष व्यवस्था की। स्त्रियों की शिक्षा के लिए 1848 ई. में प्रथम स्कूल चलाए। किसानों पर होनेवाले अन्यायों के विरोध में उनका संघटन बनाना शुरू किया। वास्तव में दलित, पीड़ित, श्रमिक और उपेक्षित स्त्री–पुरूष को उनके न्यायिक अधिकार दिला देने के लिए वे कृतसंकल्प थे। इसी कारण श्री रावसाहेब कसबेजी ने निष्कर्ष निकाला है कि "19 वीं शदी का महात्मा फुले का आंदोलन मूलतः वर्गीय आन्दोलन था।"[1]

न्यायमूर्ति गोविन्द रानडे तथा गोपाल गणेश आगरकर (1856–1895) महाराष्ट्र के ये दो और प्रमुख समाज चिन्तक रहे हैं। इन दोनों के प्रति डॉ. बाबासाहब के मन में अतीव श्रद्धा थी। ये दोनों अंग्रेजी सत्ता को समाज–सुधार के लिए अनुकूल स्थिति के रूप में देखते थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सुधार की सम्भावना कम होती है, इस कारण पहले 'समाज–सुधार' हो और बाद में 'स्वतन्त्रता' की माँग हो– ऐसा इनका कहना था। डॉ. आम्बेडकरजी भी आरम्भिक वर्षों में इसी विचार से प्रभावित थे।[2]

जोतिबा फुले के लेखों और पुस्तिकाओं के कारण, उनके द्वारा स्थापित 'सत्यशोधक समाज' के प्रयत्न के कारण मूल दलित जनता में एक नयी चेतना विकसित होने लगी। कार्यकर्त्ताओं की एक पीढ़ी तैयार होने लगी। 'सत्यशोधक समाज' का कार्य तेजी से महाराष्ट्र में फैलने लगा। ब्राह्मणेतर जनता को अभिव्यक्ति के लिए एक नया मंच प्राप्त हुआ। म.फुले के विचारों से कोल्हापुर के महाराजा, शिवाजी के वंशज राजर्षि शाहू महाराज अत्यधिक प्रभावित थे। वर्ण और जाति व्यवस्था के विरोध में आक्रामक भूमिका धारण करनेवाला इस देश का यह पहला शासक था। परिवर्तनवादी आन्दोलनों को राजाश्रय देनेवाला वह पहला विवेक–सम्पन्न राजा था। 'सत्यशोधक समाज' को केवल राजाश्रय देकर ही वे रूके नहीं, अपने प्रशासन में दलितों तथा पिछड़े समाज को अधिकाधिक हिस्सेदारी देना भी उन्होंने शुरू किया। इस सम्बन्ध में उनके द्वारा जारी आदेश महत्वपूर्ण थे। 1894 में शाहू महाराज कोल्हापुर रियासत के राजा बने।[3] 1919 में उन्होंने एक आदेश जारी कर अस्पृश्यों के लिए खोले स्वतन्त्र स्कूलों को बन्द कर राज्यशासन द्वारा चलाए जानेवाले स्कूलों में सभी जातियों के साथ अस्पृश्यों को भी प्रवेश देना शुरू किया। सरकारी स्कूलों में छुआछूत पालना उन्होंने गैरकानूनी घोषित किया। इन स्कूलों में सभी जातियों और धर्मों के छात्र इकट्ठे बैठेगे ऐसा उन्होंने घोषित किया। नासिक, नागपुर और कोल्हापुर में उन्होंने दलितों के लिए छात्रावास खोले। 1920 की नासिक की सभा में शाहू महाराज ने कहा, "शिक्षा एवं स्वावलम्बन ये दो प्रगति के साधन है। मानवीय अधिकारों को प्रस्थापित करने के लिए शिक्षा यही एक मात्र मार्ग है।" 1919 के एक आज्ञापत्र में उन्होंने कहा है कि "कोल्हापुर रियासत के रेव्यन्यू, ज्युडिशियल आदि विभागों के सभी अधिकारियों को यह आदेश दिया जाता है कि उनके विभागों में जिन अस्पृश्य वर्ग के व्यक्तियों की नियुक्तियाँ हुई है, उनके साथ वे पूरी आत्मीयता, स्नेह और मानवीयता के साथ पेश आएँ। जो अधिकारी उनके साथ ऐसा व्यवहार करना नहीं चाहता वह त्यागपत्र देकर अलग हो जाए। परन्तु इस कारण त्यागपत्र देने वाले को पेन्शन नहीं मिलगी। हमारी ऐसी इच्छा है कि हमारे राज्य का कोई भी व्यक्ति किसी और व्यक्ति के साथ पशु की तरह व्यवहार नहीं करेगा।"[4]

बड़ौदा के नरेश श्री सयाजीराव गायकवाड़ प्रजाहित दक्ष तथा जाति और वर्ण के परे जाकर 'मनुष्य' को ही केन्द्रबिन्दु माननेवाले थे। इस प्रकार डॉ. अम्बेडकरजी के जन्म के पूर्व अथवा उनके जन्म के आस पास कोल्हापुर और बड़ौदा रियासत के नरेश जाति और वर्ण के विरोध में प्रशासकीय कदम उठा रहे थे। डॉ.अम्बेडकरजी की विदेश–शिक्षा के लिए इन दोनों नरेशों ने काफी आर्थिक सहायता ही थी।[5]

सवर्णों में भी परिवर्तनवादी आन्दोलनों की शुरूआत अम्बेडकर पूर्व काल में हो चुका थी। जिनके विचारों से डॉ.अम्बेडकर प्रभावित थे, वे महादेव गोविन्द रानाडे और आगरकरजी। इसके अलावा विठ्ठल रामजी शिंदे भी इस क्षेत्र के उल्लेखनीय व्यक्ति है। श्री विठ्ठल रामजी शिंदे तुलनात्मक धर्मशास्त्र पर विदेश से पी–एच.डी. कर चुके थे। दलितों को उनके अधिकार दिलाने के लिए सतत प्रयत्नशील थे। डॉ. अम्बेडकरजी को उनका मार्ग पसन्द नहीं था। इन दोनों में वैचारिक मतभेद थे। फिर भी शिन्देजी के ऐतिहासिक योगदान को भूल नहीं सकते।[6]

***MA(ATSW), Ph.D.**

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर पूर्व महाराष्ट्र ही नहीं बल्कि संपूर्ण भारत की स्थिति जड़वत् था। म.जोतिबा फुले, न्यायमूर्ति महादेव गोविंद रानाडे, लोकहितवादी, आगरकर, महार्षि बिठ्ठल रामजी शिदे, राजर्षि शाहू महाराज, बडोदा नरेश गायकवाड– वर्ण–व्यवस्था और जाति–व्यवस्था के विरोध में क्रियाशील थे। इन व्यवस्था के विरोध में वे वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार कर रहे थे। विविध संस्थाओं की स्थापना कर वे दलितोंद्वार के लिए कृतसंकल्प थे। इन सबों के सद्प्रयास से सम्पूर्ण देश में इस भूमि को ब्राह्मणेतर आन्दोलन की पृष्ठभूमि प्राप्त हो चुकी थी।"[7] इस अर्थ में बाबासाहेब के कार्य के लिए आवश्यक जमीन तैयार हो चुकी थी। विशेषतः म.जोतिबा फुले का कार्य इस दृष्टि से क्रान्तिकारी था।[8] म.फुले ने ब्राह्मणेतरों को जो मन्त्र दिया था, उसी मन्त्र से डॉ.अम्बेडकर प्रेरित थे। फुलेजी का मन्त्र था–

"विद्या बिना मति (बुद्धि) गई,
मति (बुद्धि) बिना नीति गई,
नीति बिना गति गई,
गति बिना वित्त (सम्पत्ति) गई,
सम्पत्ति के अभाव में शूद्र बर्बाद हुए,
और केवल अविद्या के करण इतना अनर्थ हो गया।"[9]

शूद्रों की इस गुलामी के मूल में 'ज्ञान' का अभाव है। इस कारण शूद्रों को 'ज्ञान' के दरवाजे खोल देना जरूरी है– ऐसा उनका आग्रह था। फुले तथा उनके बाद के समाज–सुधारकों की जमीन पर डॉ.बाबासाहब अम्बेडकर खड़े है। बाबासाहब ने आगे चलकर भारतीय समाज की तीन सूत्र दिए– 'पढ़ो', 'संगठित हो जाओं' और संघर्ष करो'। किसी भी समाज या राष्ट्र की प्रगति के लिए इन त्रिसूत्रों की सर्वाधिक आवश्यकता होती है।

संदर्भ

1. कसबे, रावसाहेब; अम्बेडकर आणि मार्क्स, पृ. 18
2. वही पृ. 19
3. वही पृ. 21
4. पानसरे, गोविन्द : मलपृष्ठ, आहे तरी काय मण्डल आयेग?
5. वही
6. वही

7. रणसुभे, डॉ. सूर्यनारायण; डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1998, पृ. 24
8. वही पृ. 26.
9. वही पृ. 28.